अन्तरा-शब्दशक्ति

काव्य कुसुम

काव्य संग्रह

प्रदीप सोनी 'शूून्य'

काव्य कुसुम

(काव्य संग्रह)

प्रदीप सोनी शून्य

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN- "978-93-86666-75-8"

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

मुख्य कार्यालय - १५ नेहरु चौक वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१
दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५९ (मो) ९४२४७६५२५९
अणुडाक- antrashabdshakti@gmail.com
अंतरताना- www.antrashabdshakti.com
प्रथम संस्करण २०१९- प्रदीप सोनी 'शून्य'
मूल्य - ६०.०० रुपये
आवरण चित्र- संदीप सोनी,वारासिवनी
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी
KAVYA KUSUM BY PRADEEP SONI 'SHUNY'
वैधानिक चेतावनी - इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

अनुक्रमणिका

	प्रार्थना	5
1.	दिनकर	7
2.	मान सम्मान	8
3.	शुभकामना	9
4.	काव्य कुसुम	10
5.	संपदा	11
6.	जीवन कानन	12
7.	संकल्पों की परिभाषाएं	13
8.	विवेकानंद	14
9.	क्रोध	15
10.	सच्ची रिश्तेदारी	16
11.	अनुकरणीय	17

12. स्वर्णिम वैभव 18
13. प्रेम गीत 19
14. रूप की छावनी 20
15. निर्लज्ज समाधान
21
16. प्रणय उपहार 22
17. स्वार्थ के सन्दर्भ 23
18. अधरों के हस्ताक्षर 24
19. अद्भुत 25
20. निकल गया दिसंबर 26
21. कब तक 27
22. आना जाना 28
23. पर्वत 29
24. अनुभूति 30
25. नेह मूल्य 31
26. अनुप्राण 32

प्रार्थना

कविता का प्रवाह और उसकी सरसता सहृदयी को अपने वश में कर लेती है। सामान्य से हट कर अभिव्यक्ति की विशिष्टता सम्मोहन का कारण बन जाती है। यह सम्मोहन कब, कहाँ और कैसे हो जाता है; पता ही नहीं चल पाता। शब्द अर्थ ओढ़ कर गुनगुनी धूप सेंकने लगते हैं।भाव कविता के नूपुर बांधकर थिरकने लगते हैं।

वक्त की पालकी में बैठ कर कविता को विहार करते कवि देखता है। उसकी नज़र उतारता है। उसकी बलैयां लेता है। हर्ष उल्लास, शोक संवेदना और समता विषमता के भयावह गर्त और उतंग शिखरों से कविता गुजरी है। उसकी यात्रा ने कवि की मनोभावना को विरेचित किया है।

कविता में कवि का व्यक्तित्व आलोड़ित होता हुआ दिखाई देता है। वस्तुतः प्रदीप के शून्य में भी आग्रह, पूर्वाग्रह, हठ, स्वार्थ और तथाकथित सरोकार दिखाई देगा। कविताओं की इस कुम्भ यात्रा में अंतर शब्द शक्ति को हृदय तल के गहराइयों से साधुवाद देना चाहूँगा जिसने अभिप्रेरित कर सृजन को आलम्ब दिया, जो थोथा लगे उसे छोड़ कर सार ग्रहण करने का विनम्र निवेदन के साथ सहृदयी जनों का अभिवादन सहित समर्पित मेरी प्रार्थना,...

अन्तर्मन सुमन अर्पित यह अर्चना।
शब्द सार्थक हों बस यही प्रार्थना।
सुख सरिता का नीर सबको मिले।
आँगन सबके, शांति सुमन खिले।
शिक्षा की ज्योति, हर देहरी जले।
सद्भाव का भाव हर हृदय में पले।

सहयोग सदैव करने की साधना।
शब्द सार्थक हों बस यही प्रार्थना।
नम्रता नेह के देह पर अलंकार हों।
हर कलह पर सुलह के आसार हों।
राष्ट्र के प्रति समर्पण का भाव हो।
व्यक्ति को हर व्यक्ति से लगाव हो।
हर द्वार पर खड़ी हो शुभ कामना।
शब्द सार्थक हों बस यही प्रार्थना।

प्रदीप सोनी 'शून्य'

दिनकर

नीलगगन
प्राची को बुलाए
जब हँस कर।
तब नूतन रश्मियाँ
ले कर आता दिनकर।
कल्पनाएँ उड़ चलीं,
अपने अपने नीड़ से।
जीवन की सुगंध महकी
ग्वालों की भीड़ से।
जब पवन लौटता
गति का पाठ पढ़ कर।
तब नूतन रश्मियाँ
ले कर आता दिनकर।
संभावनाओं के
सरस कमल खिल उठे।
शुभ कामनाओं के
सभी संयोग मिल उठे।
खुशियाँ चमकें
जब शिखरों पर चढ़ कर।
तब नूतन रश्मियाँ
लेकर आता दिनकर।

मान सम्मान

संघर्षों को आँचल में भर कर।
टेड़े पथरीले पथ पर चल कर।
नीर लिए बहती नदिया प्यारी।
मान सम्मान की है अधिकारी।
फूल फूलते जगती में कितने,
पर गुलाब है आँखों का तारा।
शिखर लिए हैं पर्वत कितने,
पर हिमालय है पर्वत का राजा।
तारे जगमग कितने हैं नभ में,
शशि की छबि सबसे है न्यारी।
मान सम्मान की है अधिकारी।
सुविधाओं को भोग रहे जो जन,
बैठे कब से तकदीरों के तीरे।
काली मिट्टी सोना हो जाती है,
अपने कर्मों में कस कर धीरे।
जन हित में समर्पण करते जो,
कीर्ति भी रहती उनकी आभारी।
मान सम्मान की है अधिकारी।

शुभ कामना

गणतंत्र दिवस की, सफल शुभ कामना।
भूख की सहना पड़े न, किसी को यातना।

सिद्ध हो चुकी हों, यदि समर्पित अर्चनाएँ।
आकार ले चुकीं हों, यदि अपनी तमन्नाएँ।

तो टूटते प्राण की डोर तुम ज़रूर थामना।
गणतंत्र दिवस की, सफल शुभ कामना।

अधिकार के हौसले कर दो बुलंद इतने।
आशाओं के कर डालो संपन्न प्रबंध इतने।

पगडण्डी कर सके राजपथों का सामना।
गणतंत्र दिवस की, सफल शुभ कामना।

घोषणाओं का न कोई षडयंत्र चल सके।
आश्वासन का न कोई, वशीभूत चल सके।

प्रकट हो सकेगी, प्रजातंत्र की साधना।
गणतंत्र दिवस की,सफल शुभ कामना।

काव्य कुसुम

निजता के स्वर
मधुवन से कह के।
जीवन आँगन में,
काव्य कुसुम महके।
बहे अनवरत प्रेम के निर्झर।
हुई धड़कन,
चितवन पर निर्भर।
अब साँसों के पंछी,

सुमनों पर चहके।
जीवन आँगन में,
काव्य कुसुम महके।
सपनों ने डाला,
नयनों में डेरा।
आशा ने सहसा
कर लिया बसेरा।
मादक मौसम में
गीत साथ में बहके।
जीवन आँगन में,
काव्य कुसुम महके।
जगमग हुआ कामना का दर्पण।
छू भी न पाया कोई प्रलोभन।
प्रतिबिम्ब उभरते,
स्मृति में रह रह के।
जीवन आँगन में काव्य कुसुम महके।

संपदा

आधुनिकता
ओढ़ ली कितनी
हमें न कुछ पता।
लुप्तप्राय हो रही,
वृषभ धेनु की,
अमूल्य सम्पदा।
पोषक हमारी
संस्कृति के यह,
हलधर और धरा।
हरियाली शोभती
श्यामला भूमि पर
कोई जैसे अप्सरा।
हम सजग न हुए तो
खो जायेगी यह
विरासत सर्वदा।
लुप्तप्राय हो रही,
वृषभ धेनु की,
अमूल्य सम्पदा।

जीवन कानन

प्रिय यह समर्पण पावन
इसे आत्मीय बंधन दे दो।
महके मेरा जीवन कानन,
भावनाओं को चंदन दे दो।
मेरी प्रीत सरल सहज है,
इसे कभी न छल करना।
मेरी प्यार भरी मनुहार,
हँसते मुस्काते हल करना।
दिल के द्वारे मेरी धड़कन,
अभिनव अभिनन्दन दे दो।
महके मेरा जीवन कानन,
भावनाओं को चंदन दे दो।
यह चितवन चित्र तुम्हारा,
इंद्रधनुषी बना रहे सदा।
तेरे गीतों की तान मधुर,
मेरे अधरों पर चहके सदा।
मेरी स्मित स्पंदन को तुम,
अपना सा आलिंगन दे दो।
महके मेरा जीवन कानन,
भावनाओं को चंदन दे दो।

संकल्पों की परिभाषाएँ

समाधान निर्लज्ज हो गए।
रखैल हो गईं सुविधाएँ।
अपनत्व शीत में सिकुड़ गया।
संदिग्ध सभी की भूमिकाएँ।
अवसर के माथे पर लिखे,
संविधान पुत्रों के नाम।
प्रयासों के चौराहों पर हैं,
कृपा पात्र वाहन के जाम।
बरगद को नत मस्तक हैं,
पादप तृण हरित लताएँ।
तरुणाई पर जबरन ऐंठे हैं,
अमरबेल के शहजादे।
बसंत भवन में ठहरे हैं सब,
पतझर के उन्मूलन वादे।
मरणासन्न हुई जाती बेचारीं,
संकल्पों की परिभाषाएँ।

विवेकानंद

नमन ! भारत के उस दिव्य विवेक को,
जिसने वसुधा का वैभव चमकाया।
भारत भव्य विराट का जीवन दर्शन,
दुनिया के कोने कोने तक पहुँचाया।
स्पर्श किया रामकृष्ण के परम हंस ने,
तब अलौकिक चेतना दीप्त हुई मन में।
त्याग तपस्या का मधुवन लगा महकने,
मानव सेवा का मंत्र दिया जन जन में।
शब्द शब्द बन तीर भेदता धड़कन को,
अपनी अभिव्यक्ति का लोहा मनवाया।
नमन ! भारत के उस दिव्य विवेक को,
जिसने वसुधा का वैभव चमकाया।
गुंजायमान हुआ हिंदी भाषा का गौरव,
जब उदघोष हुआ बंधु भगिनी बोधन।
शिकागो का जन मन जीवन हतप्रभ,
सुनकर निष्काम योग का तत्व विवेचन।
तरुणाई को मिली दिशा राष्ट्र सृजन की,
निर्माण का परचम भारत में फहराया।
नमन ! भारत के उस दिव्य विवेक को,
जिसने वसुधा का वैभव चमकाया।

क्रोध

जब मौसम
जलवायु सा होने लगे।
धूप, छाँव में
सिर रख कर रोने लगे।
तब धैर्य को रौंद कर,
क्रोध होता है खड़ा।
जब
ऊँचाई समेटते
प्रयास बौने होने लगें।
सुविधा की
प्रतीक्षा में दर्द
मरणासन्न होने लगें।
नदी से नाव कहने लगे
किनारा है बड़ा।
तब धैर्य को रौंद कर,
क्रोध होता है खड़ा।
तारे बग़ावत करने लगे
जब आसमान से।
धरती कराहने लगे
पर्वतों के एहसान से।
झूठ के आतंक से
दरकने लगे
सत्य का आँकड़ा।
तब धैर्य को रौंद कर,
क्रोध होता है खड़ा।

सच्ची रिश्तेदारी

रोप रहे हैं, खेतों में खुशियाँ
ग़म में रहने वाले।
पगडंडी हैं राजमार्ग से,
राजमहल सपनों के।
ताक़त बन जाते,
आशीष सदा अपनों के।
मजबूरी के रथ में चलते,
जय भारत कहने वाले।
रोप रहे हैं, खेतों में खुशियाँ
ग़म में रहने वाले।
अतिथि बन आती है,
जब चाहे लाचारी।
अभाव से बन गई है,
सच्ची रिश्तेदारी।
औरों को तट तक ले जाते,
मझधार में बहने वाले।
रोप रहे हैं, खेतों में खुशियाँ
ग़म में रहने वाले।
श्रम की साधना ही
जिनको है पूजा अर्चन।
माटी में हर उत्सव मनते,
माटी ही है जीवन।
आपदाओं से कभी न डरते,
दुःख को सहने वाले।
रोप रहे हैं, खेतों में खुशियाँ
ग़म में रहने वाले।

अनुकरणीय

वे तो सदा रहेंगे वंदनीय
जिनकी मार्गदर्शन नैया ने,
सफलता के तट पहुँचाया।

जिनकी शुभ कामनाओं से,
मन सुमन सदा मुस्काया।
आचरण जिनका
सदा रहा अनुकरणीय।
वे तो सदा रहेंगे वंदनीय
जिनकी छाया में सपने
पले बढ़े और साकार हुए।
पावन स्पर्शों से जिनके,
दूर सभी अंधकार हुए।
निजता मृदुता बंधुता
सब कुछ अतुलनीय।
वे तो सदा रहेंगे वंदनीय।
भेद भाव, ऊँच नीच की
गर्तों को जिसने पाट दिया।
हारे थके,बोझिल मन को
लेश मात्र को विराट किया।
जगी आस्था धीरे धीरे,
हो गए वे पूजनीय।
वे तो सदा रहेंगे वंदनीय।

स्वर्णिम वैभव

सौजन्य भेंट, फुर्सत की दो दो बातें।
अलाव तापते, आँखों में प्यारी रातें।
अतीत का स्वर्णिम वैभव अब तो अशेष है।
सुबह शाम अविरल सहज,
मुखरित होती राम राम।
बिना पढ़े, लिखे बिना,
पूर्ण होता गीता का निष्काम।
अर्थों पर लिपटा
अब शब्दों का मात्र वेष है।
अतीत का स्वर्णिम वैभव अब तो अशेष है।
हाट बाज़ार, त्यौहार के अवसर,
नानी के दो पैसे।
झूमी झूमी खुशियाँ
एहसास करातीं कैसे कैसे ?
अपने अपने मतलब
अब अपना ही परिवेश है।
अतीत का स्वर्णिम वैभव अब तो अशेष है।
कौन कहाँ रहता है,
किसको कौन सम्हाले।
अपनी दुनिया अलग बसाए
शहरों के ऊँचे माले।
देख पराया सुख भाग
बंधुता में द्वेष है।
अतीत का स्वर्णिम वैभव अब तो अशेष है।

प्रेम गीत

प्रेम गीत की,
कली कली तान है।

बसंत को फूल पर
बड़ा अभिमान है।
राह राह में,
बिखरी सुगंध है।
धरा गगन में,
सब तरफ आनंद है।
रंगीन
मौसम को पता है,
वह भी तो मेहमान है।
काँटे भी
धैर्य धारण किये हैं।
पतझरी आँसू
सदियों से पिये हैं।
फूलों की रक्षार्थ
कंटक भी
प्रकृति की अमिट पहचान है।

रूप की छावनी

हृदय के
किले पर,
स्मृतियों की
हुकूमत है।
नयन निहारते
आज भी
ज्ञापन लिए हैं।
तिलस्मी
चितवन देखने
हर पल जिये हैं।
भावना का
हर सिपाही
संधि पर,
सहमत है।
चाहत पताका
मुस्कान पर
फहरा रही है।
रूप की छावनी
और सुदृढ़ होती
जा रही है।
प्रीत की उदघोषणा में,
प्रतीक्षा इक इबारत है।

निर्लज्ज समाधान

समाधान निर्लज्ज हो गए।
रखैल हो गईं सुविधाएँ।
अपनत्व शीत में सिकुड़ गया।
संदिग्ध सभी की भूमिकाएँ।
सरिता की बर्बरता से,
सहमे सहमे सरल किनारे।
आस्थाओं को निगल रहे,
आडम्बर दोनों हाथ पसारे।
उम्मीद की आस्तीनों में हैं,
जहरीले साँप फन फैलाएँ।
अवसर के माथे पर लिखे,
संविधान पुत्रों के नाम।
प्रयासों के चौराहों पर हैं,
कृपा पात्र वाहन के जाम।
बरगद को नत मस्तक हैं,
पादप तृण हरित लताएँ।
तरुणाई पर जबरन ऐंठे हैं,
अमरबेल के शहजादे।
बसंत भवन में ठहरे हैं सब,
पतझर के उन्मूलन वादे।
मरणासन्न हुई जाती बेचारीं,
संकल्पों की परिभाषाएँ।

प्रणय उपहार

आँसू धरे रह गए,
कण ओस के।
गया मीत प्रीत का,
बिना संकोच के।
आर्द्रता से मिल पवन।
दोहराता रहा वचन।
हृदय से प्रेम की डोर
जोडने का अनुकथन।
मोतियों की भेंट
दे रहा नित खोज के।
हरित पल्लवों की
मृदुल गोद में।
ओस लिपटी रही,
प्रकृति के आगोश में।
सुख दुख,धूप छाँव
पृष्ठ खुले सोच के।
खिल उठे ओस तन,
रवि रश्मि को निहार।
नयन कोर से दिखा,
संचित प्रणय उपहार।
स्वर शांत हो गए सब,
मौसमी आक्रोश के।

स्वारथ के सन्दर्भ

कितने बैठे प्रश्न यहां पर
और कितने शेष खड़े हैं।
संवादों की प्रेम लता में,
संदेहों के परजीव पले हैं।
अर्थों के प्याले रिक्त पड़े हैं
संबंधों की मधुशाला में।
स्वारथ के संदर्भ घुले हैं,
जीवन की इस हाला में।
शतरंजी चौखानों में सब,
अपनी अपनी चाल चले हैं।
हर सरिता तट बगुले बैठे,
स्वार्थ बैठे हैं फन डाले।
दोहरी दोहरी जीवन शैली,
ऊपर उजले अंदर काले।
जिनके घर आलोक पुंज हैं,
उनके ही घर दीये जले हैं।
संबंधों में फैले मकड़ जाल
विश्वासों में नागफनी।
लज्जा घूमती अर्धनग्न सी,
दास बन गई आमदनी।
चापलूस बनी सुविधाएँ,
आडम्बर से फूले गमले हैं।

अधरों के हस्ताक्षर

नजरों के लंबित प्रकरण
तब सुलझ गए।
जब अधरों के हस्ताक्षर
हृदय में उतर गए।।
चाहत मुस्कानें,
जब धीरे-धीरे सचेत हुईं।
भावनाएँ मिल नाचीं,
साँसों संग समवेत हुईं।
प्रेम पखेरू के,
उड़ने को पंख पसर गए।
धड़कनों ने थामी,
धैर्य की नाजुक पतवार।
कभी तो होगी,
प्रतीक्षा की नैया पार।
सपनों कल्पनाओं ने,
ढूँढ़ लिए अपने अम्बर नए।
चाहत की पगडण्डी पर,
चले सपनों के पाँव।
लगे चमकने सोने जैसे,
चितवन के मोहक गाँव।
प्रणय के हम राही,
मन महल में ही ठहर गए।

अद्भुत

तनहाई में दिल गाए तराना।
अद्भुत है जीवन का ताना-बाना।
कहीं भूख प्यास की,
व्यथा व्यक्त करते हैं आँसू।
कहीं स्वाद की गुणवत्ता पर,
आँखों से झड़ते हैं आँसू।
ग़मो के पहाड़ कहीं पर,
कहीं खुशियों का ख़ूब खजाना।
कहीं वसंत में भी
फूलों पर मुस्कान नहीं है।
कहीं पतझर महफिल में,
उदासी को स्थान नहीं है।
कहीं नरता में पशुता है,
है कहीं पशुओं में भी इंसाना।
कहीं प्रेम की पावन ज्योति,
अविरल जलती रहती है।
कहीं हृदय के समतल पर,
नफ़रत की नदिया बहती है।
कहीं माँ बाप से ही घर है,
कहीं घर ही घर से है बेगाना।

निकल गया दिसंबर

अचंभित हैं,
धरती और अंबर।
बातों ही बातों में
निकल गया दिसंबर।
हुई दोस्ती
टूटे रिश्ते।
अपनी बात
कहें हम किस से।
करना थी बात
हमें किसी से,
लग गया
किसी और को नंबर।
बातों ही बातों में
निकल गया दिसंबर।
व्यर्थ में जन्मे
अर्थ के अनर्थ
हर बात में,
कोई न कोई शर्त।
अपना अस्तित्व
बचाने,
हर कोई ओढ़ता
आडम्बर।
बातों ही बातों में
निकल गया दिसंबर।

कब तक

अर्थ इबादत के रो उठे सारे
कराह उठे सब चाँद सितारे
मानवता प्रश्न कर रही है
कब तक बरसेंगे ये अंगारे
कैसा संस्करण रोशनी का
कैसा मजहब का ये पैग़ाम
कैसा प्रतिशोध शत्रुता का
किसको सारा ये ताम झाम
जिनके रिश्ते नाते टूट गए
अब उनके कौन बने सहारे
किसकी तालीम ये ज़हरीली
किस पिटारे के हैं ये साँप
किसका ये आलाप चल रहा
कौन दे रहा इस पर थाप
आतंकी विष का यह प्याला
कब तक कोई कैसे स्वीकारे
रावण का फिर से बध हो
अधर्म मरे धर्म की जय हो
डट कर हो एक बार समर
फिर चाहे क्यों न प्रलय हो
जो निर्दोषों के जीवन छीने
नाश हो उनका बिना विचारे

आना जाना

बहती नदिया
गाती गाना।
जीना मरना, आना जाना।
समय मंच पर,
मंचन होता।
कोई हँसता,
कोई रोता।
कोई कांटों को,
नमन करे।
कोई मग में काँटे बोता।
कितना दुख है
कितना सुख है
किसे बताना?
चढ़े कोई सपनों की सीढ़ी।
सफलताओं तक
जाने को।
कोई प्रयासों के
पत्थर गाड़े।
अपनी मंजिल पाने को।
हर्ष विषाद की
मझधारों में
अपनी नाव चलाना।

पर्वत

अटल, अविचल
संघर्षों में रत।
सीना ताने
खड़े हुए पर्वत।
दृढ़ संकल्प के
सटीक उदाहरण।
हरे-भरे सब
स्वच्छ आचरण।
स्वाभिमान
सौगंध निभाते
होते कभी नहीं नत।
सदैव सूर्य का
अर्चन करते।
प्राण वायु का
शोधन करते।
प्रदूषण के प्रस्ताव पर
कभी नहीं सहमत।
नदियों झरनों के
मीठे गीत सुनाते।
जीव जंतुओं के
हैं सनातन नाते।
जिसके चरणों में
सरोवर भी शरणागत।

अनुभूति

जो सुहागन
कल्पनाओं में उतरी।
वह अनुभूति
आज तक है अनब्याही।
वह कुटीर बन गया मंदिर।
जहाँ चाहत के
देव विराजे।
प्रतीक्षा की
बासंती साँसों ने,
कितने कौतूहल रच डाले।
धन्य हो गए सब
प्रणय पथ के राही।
भावनाओं ने,
हृदय धड़कन पर
रच डालीं, सतरंगी रंगोली।
रूप माधुरी पर
चितवन ने,
नयनों की मृदुता घोली।
पूरी हुए हर कामना,
जो मुस्कानों ने चाही।

नेह मूल्य

दीपक कैसे जलता है।
अंतरतम में वेदना
रक्षा बंधन का नेह मूल्य
हम सदा चुका पाएँ।
रेशम से धागों में सिमटी
मखमल सी भावनाएँ।
बचपन की नटखट यादें,
धड़कन धड़कन गाएँ।
बहना तेरी आँखों में
कभी न आँसू आएँ।
रक्षा बंधन का नेह मूल्य
हम सदा चुका पाएँ।
जहाँ रहे नाचें खुशियाँ,
गीत तेरे गाए आँगन।
जीवन की संकट घड़ियाँ,
कर दे तू पल में चन्दन।
सारी दिशाएँ तेरे नूर से
जगमग जगमगाएँ।
रक्षा बंधन का नेह मूल्य
हम सदा चुका पाएँ।

अनुप्राण

अपने अस्तित्व का कुछ तो
अब देना होगा प्रमाण।
स्वारथ के रथ बढ़े जा रहे।
कपटी कुचक्र गढ़े जा रहे।
एक किरण जुगनू के आगे,
मेघ महाजन अड़े जा रहे।
कैसे मिले तिमिर जीवन को,
आलोकित अनुप्राण।
अन्याय के खिल रहे पलाश।
सृजन को पंखों की तलाश।
नारी स्मिता को नोंच रहे हैं,
मानव वेष में कितने पिशाच।
दमन करने इन दैत्यों का
इच्छा शक्ति संधानो बाण।
कब संप्रदाय की आग बुझेगी?
कब समता की ज्योति जलेगी?
कब तक मानवता के ऊपर,
भेद भाव की दीवार उठेगी ?
अब जागो जीवन के प्रभात,
दे दो व्यथित सांसों को प्राण।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - प्रदीप सोनी 'शून्य'
पिता - श्री बाबूलाल सोनी
माता - श्रीमती कृष्णा सोनी
जन्म - 03/11/1959 (बेगमगंज)
पता -
ई मेल - radhagoyal222@gmail.com
शिक्षा - एम.ए.(हिन्दी, अर्थशास्त्र, संस्कृत और दर्शन)
संप्रति - प्रधानाध्यापक (शासकीय हाई स्कूल सुमेर)
रुचि - साहित्य लेखन, अभिनय और कार्यक्रम संचालन
कार्यक्षेत्र - अखिल भारतीय साहित्य परिषद, तरुण साहित्य संगम।
प्रकाशन 1. कंधों पर रखे प्रश्न (नई कविता संग्रह)
2. गुंजन (साझा गज़ल संग्रह)
3. विचार मंथन (साझा संग्रह)
4. अपूर्व (गीत नवगीत साझा संग्रह)
5. शब्द मेरे अर्थ तेरे (गीत संग्रह)
सम्मान - राष्ट्रीय शिक्षक सम्मान (2010), आचार्य सम्मान (2007), अंतरा शब्द शक्ति सम्मान (2017) मातृभाषा सम्मान, साहित्य शिरोमणी, राज्य स्तरीय कहानी पुरस्कार

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी ।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com
978-93-86666-75-8
मूल्य- 60/-